ब्राह्मणधर्म आचरण संग्रह

ब्राह्मणका महत्व

ब्राह्मण, ब्रह्माके मुखसे जन्म लेनेसे,समस्त वर्णों से पूर्व उत्पन्न होनेसे, वेदको धारण करनेसे और जगत् को धर्मकी शिक्षा देनेसे सबका प्रभु है । ब्रह्माने देव और पितरोंको हव्य कव्य पहुंचाने के लिये और जगत् की रक्षाके निमित्त तप करके अपने मुखसे ब्राह्मणको उत्पन्न किया। जिन ब्राह्मणोंके मुखद्वारा स्वर्गवासी देवगण हव्य और पितरगण कव्यको सदा भोजन करते हैं उनसे अधिक श्रेष्ठ कौन होसकता है ? उत्पन्न हुए पदार्थों में प्राणधारी, प्राणधारियों में बुद्धिवाले जीव, बुद्धिवालोंमें मनुष्य, सब मनुष्योंमें ब्राह्मण ब्राह्मणोंमें विद्वान्, विद्वानों में कृतबुद्धि, कृतबुद्धिवालों में कर्तव्य कार्य करनेवाले और कर्तव्य कार्य करनेवालों में ब्रह्मज्ञानी श्रेष्ठ हैं ॥[1]

जिन ब्राह्मणोंके कोपसे अग्नि सर्वभक्षी हुआ, समुद्रका जल खारा होगया और चन्द्रमा क्षयरोगयुक्त होकर फिर अच्छा हुआ उनको क्रोधित करके कौन नष्ट नहीं होगा? जो ब्राह्मण स्वर्गादि-लोक और लोकपालोंकी सृष्टि कर सकते हैं और क्रोध करके देवताओंको अदेवता बना सकते हैं, कौन पुरुष उनको पीड़ा देकर अपनी वृद्धि कर सकता है। जिनके

---

[1] उत्तमाङ्गोद्भवाज्ज्यैष्ठ्याद् ब्रह्मणश्चैव धारणात् । सर्वस्यैवास्य सर्गस्य धर्मतो ब्राह्मणः प्रभुः ॥

तं हि स्वयम्भूः स्वादास्यात्तपस्तप्त्वादितो सृजत् । हव्यकव्याभिवाह्याय सर्वस्यास्य च गुप्तये ॥

यस्यास्येन सदाश्नन्ति हव्यानि त्रिदिवौकसः । कव्यानि चैव पितरः किम्भूतमधिकं ततः ॥

भूतानां प्राणिनः श्रेष्ठाः प्राणिनां बुद्धिजीविन | बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः ॥

ब्राह्मणेषु तु विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः । कृतबुद्धिषु कर्त्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः ॥ मनु-१.९३-९७

आश्रय अर्थात् यज्ञादि करानेसे लोक और देवगण सदा स्थित हैं और ब्रह्म ही जिनका धन है उनकी हिंसा करके कौन जीवित रहैगा। जैसे संस्कार युक्त अथवा संस्काररहित अग्नि महान् देवता है वैसे विद्वान् होवे चाहे अविद्वान् हो ब्राह्मण महान् देवता है अर्थात् ब्राह्मणत्व युक्त अविद्वान् ब्राह्मण भी पूजने योग्य है। जैसे महातेजस्वी अग्नि श्मशान में रहनेपर भी दूषित नहीं होता; यज्ञमें होम होनेपर वृद्धिको प्राप्त होता है, वैसे कुत्सितकर्मोंसे प्रवृत्त होनेपर भी ब्राह्मण पूज्य है; क्योंकि वह महान् देवता है।[2]अग्निमें हवन करनेकी अपेक्षा ब्राह्मणरूपी अग्निमें हवन करना श्रेष्ठ है ।[3] तीनों लोक, तीनों वेद, चारों आश्रम और तीनों अग्निकी रक्षा के लिये पूर्वकालमें विधाताने ब्राह्मणको रचा था।[4] ब्राह्मणका मुख जल और कांटेसे रहित खेत है, उसीमें सब वीज बोना चाहिये; यही खेती सब कामना देनेवाली है ।[5] जो गृहस्थ अपने घरमें ब्राह्मणके आनेपर पग धोने के लिये जल, पादुका, दीप, अन्न और रहनेका स्थान देता है उसके पास यमराज नहीं आता है। जबतक

---

[2] कृतः सर्वभक्ष्योऽग्निरपेयश्च महोदधिः । क्षयी चाप्यायितः सोमः को न नश्येत्प्रकोप्य तान् ॥

लोकानन्यान्सृजेयुर्ये लोकपालांश्च कोपिताः । देवान्कुर्युरदेवांश्च कः क्षिण्वंस्तांन्समृध्नुयात् ||

यानुपाश्रित्य तिष्ठन्ति लोका देवाश्च सर्वदा । ब्रह्म चैव धनं येषां को हिंस्यात्ताञ्जिजीविषुः ॥

अविद्वांश्चैव विद्वांश्च ब्राह्मणो देवतं महत् । प्रणीतचाप्रणीतश्च यथाग्निर्दैवतं महत् ॥

श्मशानेष्वाप तेजस्वी पावको नैव दुष्याते | हूयमानश्च यज्ञेषु भूय एवाभिवर्धते ॥

एवं यद्यप्यनिष्टेषु वर्तन्ते सर्वकर्मसु । सर्वथा ब्राह्मणाः पूज्याः परमं दैवतं हि तत् ॥ मनु- ९/३१४-३१९ ॥

[3] अग्नेः सकाशाद्विमानौ हुतं श्रेष्ठमिहोच्यते ॥ या०स्मृति - १/३१६ ॥

[4] त्रयो लोकास्त्रयो वेदाआश्रमाश्च त्रयोऽग्नयः । एतेषां रक्षणार्थाय संसृष्टा ब्राह्मणाः पुरा ॥ अत्रिस्मृति | २५ ॥

[5] ब्राह्मणस्य मुखं क्षेत्रं निरुदकमकण्टकम् । वापयेत्सर्वबीजानि सा कृषिः सर्वकामिका ॥पाराशरस्मृति-१/ ६४ ॥

ब्राह्मणोंके चरणोंके जलसे पृथ्वी भीगी हुई रहती है तबतक उस गृहस्थ के पितर कमलके पत्तों में अमृत पीते हैं ।[6] ब्रह्माने वेद धारण करनेके लिये, पितर और देवताओंकी तृप्ति के निमित्त और धर्मकी रक्षा के लिये तप करके ब्राह्मणको उत्पन्न किया। सबसे ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, उनमें यद पढ़नेवाले, वेद पढ़नेवालों में वेदविहितकर्म करनेवाले और वेदविहित-कर्म करनेवालों में भी आत्म-तत्त्वज्ञानी श्रेष्ठ हैं ।[7]

जो फल कार्तिक की पूर्णिमाको ज्येष्ठपुष्करतीर्थ में कपिलागौ दान करनेसे होता है वही फल ब्राह्मणोंके चरण धोनेसे मिलता है । ब्राह्मणके स्वागत करनेसे अग्नि, आराम देनेसे इन्द्र, चरण-धोनेसे पितर और अन्न आदि देनसे ब्रह्मा प्रसन्न होते हैं। माता और पितासे परम तीर्थ गङ्गा और गौ हैं; किन्तु ब्राह्मणोंसे श्रेष्ठ तीर्थ न हुआ है, न होगा। ब्राह्मण देवताओं के देवता हैं; जगत् का कारण प्रत्यक्ष ब्रह्मतेज ही है।[8] जपका छिद्र, तपका छिद्र तथा यज्ञके कर्मोंका छिद्र ब्राह्मणोंके सफल कह देनेसे नष्ट होजाता है । ब्राह्मणोंके वचनोंको देवता मानते हैं, ब्राह्मण सब देवताओं के रूप हैं, इससे उनका वचन झूठा नहीं होता। उपवास, व्रत, स्नान और तीर्थका फल ब्राह्मणोंके कहनेसे सफल होता है। जिस

---

[6] पादोदकं पादधृतं दीपमन्नं प्रतिश्रयम् । यो ददाति ब्राह्मणेभ्यो नोपसर्पति तं यमः ॥

विप्रपादोदकलिना यावत्तिष्ठति मंदिनी । तावत् पुष्करपात्रेषु पिबन्ति पितरोऽमृतम् ॥व्यासस्मृति - ४/ ८-९

[7] याज्ञवल्क्यस्मृति - १/१९८-१९९ ॥

[8] यत्फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे । तत्फलं ऋषयः श्रेष्ठा विप्राणां पादशोधने ॥

स्वागतेनाग्नयः प्रीता आसनेन शतक्रतुः । पितरः पादशौचेन अन्नाद्येन प्रजापतिः ॥

मातापित्रोः परं तीर्थं गङ्गा गावो विशेषतः । ब्राह्मणात्परमं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥

ब्राह्मणः स भवेच्चैव देवानामपि देवतम् । प्रत्यक्षं चैव लोकस्य ब्रह्मतेजो हि कारणम् ॥ व्यास स्मृति४/१०-२२, ४७

कर्मको ब्राह्मण कहदेता है कि यह पूर्ण हुआ उसके उस वचनको नमस्कार करके शिरपर धारण करनेवाले अग्निष्टोम यज्ञका फल पाते हैं। सब कामनाओंका देनेवाला, जलसे रहित चलनेवाला तीर्थ ब्राह्मण है, उनके वचनरूपी जलसे मलीन मनुष्य शुद्ध होजाते हैं।[9] सब वर्णोंमें ब्राह्मण उत्तम हैं इसलिये क्षत्रियोंको उनका उनकी आज्ञाका पालन करना चाहिये और शूद्रोंको यथारीति उनकी सेवा करनी चाहिये; और वेदज्ञ-ब्राह्मण तो निश्चय ही सबके माननीय हैं।[10]

ब्राह्मण आदरणीय एवं अवध्य

शिक्षक होने के कारण ब्राह्मण आदरणीय है। वह सबका गुरु है। महाभारत में भी धर्मशास्त्रों के समान ब्राह्मण को आदरणीय और अवध्य माना गया है साथ ही ब्राह्मण सबका उद्धारक है। मार्कण्डेय जी ने युधिष्ठिर से कहा कि "ब्राह्मण जप, मन्त्र, पाठ, होम स्वाध्याय और वेदाध्ययन के द्वारा ही वेदमयी नौका का निर्माण करके दूसरों को भी तारते

---

[9] जपच्छिद्रं तपरिछद्रं यच्छिद्रं यज्ञकर्मणि । सर्वं भवति निश्छिद्रं यस्य चेच्छन्ति ब्राह्मणाः ॥

ब्राह्मणा यानि भाषन्ते मन्यन्ते तानि देवताः । सर्वदेवमया विप्रा न तद्वचनमन्यथा ॥

उपवासो व्रतं चैव स्नानं तीर्थफलं तपः । विप्रैस्सम्पादितं सर्व सम्पन्नं तस्य तत्फलम् ॥

सम्पन्नमिति यद्वाक्यं वदन्ति क्षितिदेवताः । प्रणम्य शिरसा धार्यमग्निष्टोमफलं लभेत् ॥

ब्राह्मणा जङ्गमं तीर्थं निर्जलं सार्वकामिकम् । तेषां वाक्योदकेनैव शुद्धयन्ति मलिना जनाः ॥ शतातप १/२६-३०

[10] सर्वेषां चैव वर्णानामुत्तमो ब्राह्मणो यतः । क्षत्रस्तु पालयेद्विमं विप्राज्ञाप्रतिपालकः ॥

सेवां चैव तु विप्रस्य शूद्रः कुर्याद्यथोदितम् । सर्वेषां चापि वै मान्यो वेदविद्द्विज एव हि ॥

लघुआश्वालायनस्मृति२२/१-२

हैं और स्वयं भी तरते हैं।"[11]आदिपर्व में लिखा है कि- गरुड़ जब अमृत लेने के लिये जाने लगे तब उनकी माता विनता ने ब्राह्मणों के महत्व को बताते हुए कहा कि "ब्राह्मण समस्त प्राणियों का अग्रज, सब वर्गों में श्रेष्ठ, पिता और गुरू हैं।"[12]महाभारत में विनता ने गरुड़ से कहा है कि "सत्पुरुषों के लिये ब्राह्मण आदरणीय माना गया है। तुम्हें क्रोध आ भी जाय तो भी ब्राह्मण की हत्या से सर्वथा दूर रहना चाहिये।[13] गुरू होने के कारण ही ब्राह्मण की हत्या करना धर्मधास्त्रों में वर्जित है।[14]महाभारत में विनता ने गरुड़ से कहा कि अमृत लेने के लिए जाते समय तुम्हें जो रास्ते में मिले उसका तुम भक्षण कर लेना किन्तु ब्राह्मण को नहीं मारना क्योंकि "ब्राह्मण समस्त प्राणियों के लिए अवध्य है। वह अग्नि के समान दाहक होता है।"[15]ब्राह्मण की श्रेष्ठता बताते हुए अणीमाण्डव्य ने धर्मराज से कहा कि "ब्राह्मण का वध सम्पूर्ण प्राणियों के वध से भी अधिक भयंकर है।"[16]

ब्राह्मण के द्वादश व्रत

महाभारत में धृतराष्ट्र ने सनत्सुजात से ब्राह्मणों के व्रत के विषय में पूछा कि ब्राह्मणों के व्रत कितने प्रकार के होते हैं तब सनत्कुमार ने धृतराष्ट्र से कहा कि “धर्म, सत्य, इन्द्रिय-

---

[11] जपमंन्त्वंच होमैश्च स्वाध्यायाध्ययनेन च । नावं वेदमयीं कृत्वा तारयन्ति तरन्ति च ।महाभारत वन प० २००.१३

[12] तदेतं विविधंलिङ्ग स्त्वं विद्यास्तं द्विजोत्तमम् । भूतानामग्रभूविप्रो वर्णश्रेष्ठ पिता गुरुः ॥महाभारत आ०प० २८.७३

[13] एवमादिस्वरूपस्तु सतां वै ब्राह्मणो मतः । स ते तात न हन्तव्यः संक्रद्धं नापि सर्वथा ॥ महाभारत,आ०प०२८.५

[14] अवध्यो वै ब्राह्मणः सर्वापराधेषुः । बौधायन धर्मसूत्र - १-१०-१८,१६

[15] न च ते ब्राह्मणं हन्तु कार्या बुद्धिः कथंचन । अवध्यः सर्वभूतानां ब्राह्मणो ह्यनलोपमः || महाभारत,आ०प० २८.३

[16] अल्पेऽपरावेऽपि महान् ममदण्डत्वया कृतः ॥ गरीयान् ब्राह्मणवधः सर्वभूतवधादपि ॥ महाभारत,आ०प०१०७.१५

निग्रह, तप, मत्सरता का अभाव, लज्जा, सहनशीलता, किसी के दोष को न देखना, यज्ञ करना, दान देना, धैर्य और शास्त्र ज्ञान- ये ब्राह्मण के बारह व्रत हैं।[17]

स्वाध्याय ब्राह्मण का परम धर्म और देवत्व

अध्यापन और अध्ययन ब्राह्मण के मुख्य कर्तव्य हैं। वेद के अध्ययन को ही 'स्वाध्याय' कहते थे। **'स्वाध्यायोऽध्येतव्यः'** की श्रुति में 'स्वाध्याय' का अर्थ अपनी शाखा का वेद है। स्वाध्याय के द्वारा ही वेद की रक्षा हो सकती थी। इसीलिये 'स्वाध्याय' अर्थात् वेद का अध्ययन ब्राह्मण का मुख्य कर्तव्य है ।[18]

महाभारत में युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों के कर्मों के विषय में भीष्म से पूछा कि सबके विषय में तो मुझ को ज्ञान हो गया कि समस्त प्राणियों के क्या-क्या धर्म हैं। अब आप मुझे केवल ब्राह्मणों के धर्म बताने की कृपा करें। तब भीष्मजी बोले कि "इन्द्रिय संयम ब्राह्मणों का प्राचीन धर्म है किन्तु वेदशास्त्रों का स्वाध्याय भी उनका मुख्य कर्म है, इससे उनके सब कर्मों की पूर्ति होती है।"[19]

स्वाध्याय ही ब्राह्मणों के देवत्व का मुख्य आधार है। विद्याध्ययन में रत रहने के कारण ही ब्राह्मण सबसे श्रेष्ठ हैं। यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा कि ब्राह्मणों में देवत्व क्या है तथा पुरुषों का

[17] धर्मश्च सत्यं च दमस्तपश्च अमात्सर्वं ह्रीस्तितिक्षानसूया ।

यज्ञश्च दानं च धृतिः श्रुतं च व्रतानि वै द्वादश ब्राह्मणस्य ॥ महाभारत, उ०प० ४३.२०

[18] ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयः इति ।महाभाष्य

[19] दममेव महाराज धर्ममाहु पुरातनम् । स्वाध्याभ्यसनं चैव तत्र कर्म समाप्यते ॥ महाभारत,शांति प०६०.०९

सा धर्म क्या है ? तब युधिष्ठिर ने कहा कि "वेदों का स्वाध्याय ही ब्राह्मणों में देवत्व है, कठिन तपस्या करना ब्राह्मणो का धर्म है ,मृत्यु को प्राप्त होना नियति है तथा दूसरो की निन्दा करना ब्राह्मणो मे दुष्टों के समान कर्म है ।[20]

ब्राह्मण के स्वभाव और कर्तव्य

“द्विज श्रेष्ठ और उदार बने, वेदों का अध्ययन करे, सतत सावधान रहकर स्वाध्याय में ही लगा रहे, देवता लोग उसे ब्राह्मण मानते हैं।"[21] भरद्वाज ने भृगुजी से ब्राह्मण के कर्मों के विषय में पूछा कि किन कर्मों से ब्राह्मण कहलाता है।भृगुजी बोले कि "कर्म आदि संस्कारों से सम्पन्न, पवित्र एवम् वेदों के स्वाध्याय में संलग्न ब्राह्मणोचित छः कर्मों में स्थित, सदाचार का पालन तथा उत्तम यज्ञ, शिष्ट अन्न का भोजन करने वाला गुरू के प्रति प्रेम रखने वाला मनुष्य ब्राह्मण कहलाता है।"[22]महाभारत मेंब्राह्मण धर्म की दूसरी परिभाषा भी बताई कि "जो जितेन्द्रिय, धर्मपरायण, स्वाध्याय तत्पर और पवित्र हैं तथा काम और क्रोध जिनके वश में हैं देवतालोग ब्राह्मण उसे ही मानते हैं[23]युधिष्ठिर के द्वारा ब्राह्मणों के कर्तव्य पूछे जाने पर भीष्मजी ने कहा कि "मन इन्द्रियों का संयम रखने वाला, सोमयाग

---

[20] स्वाध्याय एषां देवत्वं तप एषां सतामिव । मरणं मानुषो भावः परिवादोऽसतामिव ॥ । वही वनपर्व ३१३.५०

[21] ब्रह्मचारीवदान्यो योऽधोयीत् द्विज पुङ्गवः । स्वाध्यायवान् मत्तो ये तं देवा ब्राह्मण विदुः ॥ वही , वनपर्व २०६.३७३

[22] जातकर्मादिभि यस्तु संस्कार संस्कृतः शुचिः | वेदाध्ययनसम्पन्नः षट्सु कर्मस्ववस्थितः ॥

शौचाचार स्थितः सम्यग्विधसाशी गुरुप्रियः । नित्यव्रती सत्यपरः स वै ब्राह्मण उच्यते । म०भा०शान्तिपर्व १८६.२,३०

[23] जितेन्द्रियो धर्मपरः स्वाध्याय निरतः शुचिः | कामक्रोधो वशो यस्य तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥ म०भा०वनपर्व २०७.३४५

कराके सोमरस पीने वाला, सदाचारी, दयालु, निष्काम, सरल, मृदु, क्रूरता रहित, क्षमाशील हो वही ब्राह्मण कहलाने योग्य है।[24]द्रौपदी ने ब्राह्मण का धर्म बताते हुए युधिष्ठिर से कहा कि "समस्त प्राणियों में मैत्रीभाव, दान लेना, दान देना अध्ययन और तपस्या करना ये ब्राह्मणों के ही कर्त्तव्य है।[25]डुण्डुभ ने रुरु को अहिंसा का उपदेश देते समय ब्राह्मण के धर्म के विषय में कहा कि "अहिंसा, सत्य, क्षमा और वेदों का स्वाध्याय निश्चय ही ये ब्राह्मण के उत्तम धर्म हैं।[26]

विद्वान् ब्राह्मण (पण्डित) के लक्षण

विदुर ने धृतराष्ट्र को पंडित के लक्षण बताते हुये कहा है कि "अपने स्वरूप का ज्ञान, उद्योग, दुःख सहने की शक्ति और धर्म में स्थिरता ये गुण जिस मनुष्य को पुरुषार्थ से व्युत नहीं करते वही पण्डित कहलाता है।[27] महाभारत में व्यासजी ने शुकदेवजी को ब्राह्मण के कर्तव्य बताते हुए कहा कि ब्राह्मण को वेदों में बताई हुई त्रयी विद्या- ॐ (अ, ऊ, म्) इन तीन अक्षरों से सम्बन्ध रखने वाली प्रणव विद्या का चिन्तन एवं विचार करने चाहिये। वेद को छहों अंगों सहित ऋक्, साम, यजुष

---

[24] यः स्याद् दान्तः सोमपश्चार्यशीलः सानुक्रोशः सर्वसहो निराशीः ।

ऋजुमृदुरनृशंसः क्षमावान् स वै विप्रो नेतरः पापकर्मा ॥ म०भा०शान्तिपर्व ६३.८

[25] मित्रता सर्वभूतेषु दानमध्ययनं तपः ।ब्राह्मणस्यैव धर्मः स्यान्न राज्ञो राजसत्तम । म०भा०शान्तिपर्व १४.१५

[26] अहिंसा सत्यवचनं क्षमा चेति विनिश्चितम् । ब्राह्मणस्य परो धर्मो वेदानां धारणापि च । म०भा०आदिपर्व ११.१५

[27] आत्मज्ञानं समारम्भस्तितिक्षा धर्मनित्यता । यमर्थानापकर्षन्ति स वं पंडित उच्यते ॥ म०भा०उद्योग पर्व ३३.१५

एवं अथर्व के मंत्रों का स्वर व्यंजन के सहित अध्ययन करे। ब्राह्मण सदा सदाचार का वर्ताव करे। किसी जीव को कष्ट न दे। सत्य प्रतिज्ञ बने। संतों की सेवा में रह कर तत्त्वज्ञान प्राप्त करे। सत्पुरुष बने और शास्त्रों की व्याख्या करने में कुशल बने।ब्राह्मण को अपने तेज की वृद्धि करने के लिये क्या करना चाहिये ऐसा पूछा जाने पर व्यासजी बोले कि "हर्ष, मद और क्रोध से रहित जो ब्राह्मण है, वह दुःख से दूर रहता है। दान, वेदाध्यायन, यज्ञ, तप, लज्जा, सरलता और इन्द्रियसंयम- इन सद्गुणों से ब्राह्मण अपने तेज की वृद्धि और पाप का नाश करता है।"[28]

मान्य ब्राह्मण और पक्तिपावन ब्राह्मण

जो ब्राह्मण संस्कारआदि कर्मोंसे द्विज बनाता है और वेदादिके व्याख्यानोंसे धर्म उपदेश करता है वह ब्राह्मण बालक होनेपर भी धर्मपूर्वक वृद्धोंके लिये भी पिताके समान माननीय है। वड़ी अवस्था, श्वेत- केश, धन और बहुत सम्बन्धी के रहनेपर कोई बड़ा नहीं होसकता; महर्षियोंने निश्चय किया है कि जो लोग अङ्गोंके सहित वेदों को जानते हैं वही लोग श्रेष्ठ हैं ।[29]जिन पंक्तिपावन ब्राह्मणोंके द्वारा पंक्तिहीन ब्राह्मणोसे दूषित पंक्ति भी पवित्र होजाती है उनका वृत्तान्त मै पूरी रीतिसे कहता हूं। जो ब्राह्मण सब वेदोंके जाननेमें

---

[28] वीतहर्षमदक्रोधो ब्राह्मणो नावसीदति । दानमध्ययनं यज्ञस्तपो ह्रीराजंवं दमः ॥

दानमध्ययनं यज्ञस्तपो ह्रीरार्जवं दमः। एतैर्विवर्धते तेजः पाप्मानं चापकर्षति ॥म०भा०शान्तिपर्व २४१.७

[29] ब्राह्मस्य जन्मनः कर्त्ता स्वधर्मस्य च शासिता। बालोऽपि विप्रो वृद्धस्य पिता भवति धर्मतः ॥

न हायनैर्न पलितैर्न वित्तेन न बन्धुभिः । ऋषयश्चक्रिरे धर्म योऽनूचानः स नो महान् ॥ मनु २/१५३,१५४

निपुण है, वेदाङ्गोंके जानने में श्रेष्ठ है और जिनके पिता आदि सब श्रोत्रिय है उनको पंक्तिपावन कहते है। त्रिणाचिकेत, पञ्चाग्नि, त्रिसुपर्ण, छहों वेदाङ्ग जाननेवाले, ब्राह्मविवाहसे विवाहित पत्नी के पुत्र, ज्येष्ठसामग अर्थात् सामवेदका आरण्यक भाग - गानेवाले, वेदका अर्थ जाननेवाले, वेदका वक्ता, ब्रह्मचारी, बहुत दान करनेवाले और एकसौ वर्ष की अवस्थावाले ब्राह्मण पंक्तिपावन कहेजाते है ।[30]विहित कर्मोंके करनेवाले, शिष्य आदिको शिक्षा देनेवाले, धर्मके व्याख्यान करनेवाले और सब प्राणियोसे मित्रभाव रखनेवाले ब्राह्मण यथार्थ में ब्राह्मण कहने योग्य है; कोई उनको बुरा अथवा रूखा वचन न कहे।[31] जैसे प्रचण्ड अग्नि हरितवृक्षोंको भी जला देता है वैसेही वेदज्ञ ब्राह्मण अपने कर्मजनित दोषोंको नष्ट करदेता है । वेद और शास्त्रों के तत्त्वोंको जाननेवाला ब्राह्मण किसी आश्रम में रहे, इसी लोकमें ब्रह्मरूपताको प्राप्त होता है ।[32] ब्राह्मण ब्राह्मणके घरमे जन्म लेनेसे ब्राह्मण कहाजाता है, संस्कार होनेसे द्विज कहलाता है, विद्या पढ़नेसे विप्र होता है और इन तीनोंके होनेसे श्रोत्रिय कहाजाता है। जो ब्राह्मण वेद और शास्त्रको पढ़ाता है और शास्त्रके अर्थका ज्ञान रखता है वह वेदविद् कहलाता है, उसका वचन

---

[30] अपाङ्क्चोपहता पङ्क्तिः पाव्यते यैर्द्विजोत्तमैः । तान्निवोधत कात्स्न्यैन द्विजाग्र्यान्पङ्क्तिपावनान ॥

अग्र्याः सर्वेषु वेदेषु सर्वप्रवचनेषु च । श्रोत्रियान्वयजाश्चैव विज्ञेयाः पङ्क्िपावनाः ॥

त्रिणाचिकेतः पञ्चाग्निस्त्रिसुपर्णः षडङ्गवित् । ब्रह्मदेयात्मसन्तानो ज्येष्ठ सामग एव च ॥

वेदार्थवित् प्रवक्ता च ब्रह्मचारी सहस्रदः । शतायुश्चैव विज्ञेया ब्राह्मणाः पङ्क्िषावनाः ॥ मनु २/१८३-१८६

[31] विधाता शासिता वक्ता मैत्रो ब्राह्मण उच्यते । तस्मै नाकुशलं ब्रूयान्न शुष्कां गिरमीरयेत् ॥ मनु ११/३५

[32] यथा जातबलो वह्निर्दहत्यार्द्रानपि द्रुमान् । तथा दहति वेदज्ञः कर्मजं दोषमात्मनः ॥

वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो यत्र तत्राश्रमे वसन् । इहैव लोके तिष्ठन्स ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ मनु- १२/१०१-२ ॥

पवित्र है एक भी वेदविद् ब्राह्मण जिस धर्मका जो निश्चय करदे उसीको परमधर्म मानना चाहिये; किन्तु सौहजार मूर्ख ब्राह्मण कहै उसको नहीं।[33] जो ब्राह्मण विस्तारसहित सम्पूर्ण वेद, ६ वेदाङ्ग इतिहास तथा पुराणका विचार करता है उसको वेदपारग कहते है ।[34] जो ब्राह्मण लोकव्यवहार और वेद तथा वेदाङ्गोंको जानता है; वाकोवाक्य (प्रश्नोत्तररूप वैदिक ग्रन्थ), इतिहास और पुराण जानने में प्रवीण है, इन्हींकी अपेक्षा करनेवाला और इन्हीसे जीविका करनेवाला, ४० संस्कारोंसे शुद्ध, ॐ ३ कर्म (वेद पढ़ना, यज्ञ करना और दान देना) अथवा ६ कर्म (पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञकरना, यज्ञकराना, दान देना और दानलेना) में तत्पर और समयके अनुकूल नम्रताके सहित आचारविचारमें व्यवहार करनेवाला है उसको बहुश्रुत कहतेहैं ॥[35] योग, तपस्या, इन्द्रियोंका संयम, दान, सत्य, शौच, दया, वेद, विज्ञान, आस्तिकता; ये सब ब्राह्मणके चिह्न हैं। जो ब्राह्मण सब प्रकारसे इन्द्रियोंके दमन करनेवाले हैं; जिनके कान वेदोंसे परिपूर्ण हैं, जो जितेन्द्रिय और जीवहिंसा से रहित हैं और दान लेनेमें संकोच करते हैं, ऐसे ब्राह्मण मनुष्यों के तारनेके

---

[33] -- । जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते ॥

विद्यया याति विप्रत्वं श्रोत्रियस्त्रिभिरेव च । वेदशास्त्राण्यधीते यः शास्त्रार्थं च निबोधयेत् ॥

तदासौ वेदवित्प्रोक्तो वचनं तस्य पावनम् । एकोपि वेदविद्धर्मं यं व्यवस्थेद् द्विजोत्तमः ॥

सज्ञेयः परमो धर्मो नाज्ञानामयुतायुतैः ॥ अत्रि स्मृति १३८-१४१

[34] मीमांसते च यो वेदान् षड्भिरः सविस्तरैः । इतिहासपुराणानि स भवेद्वेदपारगः ॥ व्यास स्मृति ४/४५

[35] स एष बहुश्रुतो भवति लोकवेदवेदाङ्गविद् वाकोवाक्येतिहासपुराणकुशलस्तदपेक्षस्तवृत्तिश्चत्वारिंशता संस्कारैः संस्कृतस्त्रिषु कर्मस्वभिरतः षट्सु वा समयाचारिकेष्वभिविनीतः ॥ गौतम स्मृति-८/२ ॥

लिये समर्थ हैं।[36] मनुष्य वेद और शास्त्र - पढ़े हुए तथा शास्त्रके अर्थको बतानेवाले ब्राह्मणके हाथसे अपनी सेवा करवाताहै उसके धर्मकी वृद्धि नहीं होती और उसकी लक्ष्मी तथा आयु क्षीण होजातीहै। जो ब्राह्मण स्वाधीन और सन्तुष्ट रहकर सदाचार में तत्पर रहता है वह संसार - समुद्रसे पार होता है।[37]

ब्राह्मण आचार

ब्राह्मणको उचित है कि विषके समान सदा सम्मानसे डरे और अमृतके समान सदा अपमानकी आकांक्षा करे ; अन्यसे अपमान किया हुआ पुरुष सुखसे सोता है, सुखसे जागता है और सुखसे लोकमें विचरता है और अपमान करनेवालेका नाश होता है।[38]

ब्राह्मणको उचित है कि अपनी आयुका पहिला चौथाई भाग गुरुके घर में बितावे और दूसरे चौथाई भाग में विवाह करके निज गृहमें निवास करे। जिस वृत्तिसे किसी जीवसे कुछ द्रोह नही होवे अथवा अल्प द्रोह होवे बिना आपत्कालके अन्य समयमें ऐसीही वृत्ति

---

[36] योगस्तपो दमो दानं सत्यं शौचं दया श्रुतम् । विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतद् ब्राह्मणलक्षणम् ॥

ये शान्तदान्ताः श्रुतिपूर्णकर्णा जितेन्द्रियाः माणिवधान्निवृत्ताः ।

प्रतिग्रहे सङ्कुचिताग्रहस्तास्ते ब्राह्मणास्तारयितुं समर्थाः ॥ वशिष्ठ स्मृति - ६/२१-२२

[37] वेदविद्द्विजहस्तेन सेवा संगृह्यते यदि । न तस्य वर्धते धर्मः श्रीरायुः क्षीयते ध्रुवम् ॥

संतुष्टो येन केनापि सदाचारपरायणः । पराधीनो द्विजो न स्यात्स तरेद्भवसागरम् ॥ लघुआश्वालायनस्मृति२२/१७,२४

[38] सम्मानाद्ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव । अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा ॥

सुखं ह्यवमतः शेते सुखं च प्रतिबुध्यते । सुखं चरति लोकेऽस्मिन्नवमन्ता विनश्यति ॥ मनु २/१६२- १६३ ॥

अवलम्बन करे। केवल गृहस्थी धर्म के निर्वाहके लिये निज वर्ण विहित उत्तम कार्यसे, शरीरको क्लेश नहीं देकर धनका सञ्चय करे।

ऋत, अमृत, मृत, प्रमृत अथवा सत्यानृत वृत्तिसे अपना निर्वाह करे, किन्तु श्ववृत्तिसे कभी नहीं। **उच्छ वृत्ति और शिल वृत्तिको ऋत वृत्ति, बिना मांगेहुए भिक्षा आदि प्राप्तको अमृतवृत्ति, मांगो हुई भिक्षाको मृतवृत्ति, कृषिकर्मको प्रमृतवृत्ति और वाणिज्यको सत्यानृत वृत्ति कहते है; इससे भी जीवन व्यतीत करे , किन्तु सेवा करना कुत्तेकी वृत्ति कहलाती है इसलिये सेवाका काम कभी नही करे।**

गृहस्थ ब्राह्मण कोठिले भर अन्न, अथवा ऊंटनी भर अन्न, तीन दिन खासे योग्य अन्न केवल एक दिन के भोजन योग्य अन्न सञ्चय करे।[39] इन ४ प्रकारके गृहस्थ ब्राह्मणोंमे क्रमसे पहिलेसे पीछेवाले श्रेष्ठ और स्वर्गादि लोकको जीतने वाले होते है। इनमें कोई एक ६ कामोंसे अर्थात् उञ्छ वृत्ति, शिल वृत्ति, अयाचित भिक्षा, याचित भिक्षा, कृषि और वाणिज्यसे, कोई तीन कामोंसे अर्थात् याजन, अध्यापन और प्रतिग्रहसे, कोई दो कामोंसे

---

[39] चतुर्थमायुषो भागमुषित्वाद्यं गुरौ द्विजः । द्वितीयमायुषो भागं कृतदारो गृहे वसेत् ॥

अद्रोहेणैव भूतानामल्पद्रोहेण वा पुनः । या वृत्तिस्तां समास्थाय विप्रो जीवेदनापदि ॥

यात्रामात्र प्रसिद्ध्यर्थं स्वैः कर्मभिरगर्हितैः । अक्लेशेन शरीरस्य कुर्वीत धनसञ्चयम् ॥

ऋतामृताभ्यां जीवेत्तु मृतेन प्रमृतेन वा | सत्यानृताभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कदाचन ॥

ऋतमुञ्छशिलं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम् । मृतं तु याचितं भैक्षं प्रमृतं कर्पणं स्मृतम् ॥

सत्यानृतं तु वाणिज्यं तेन चैवापि जीव्यते । सेवा श्ववृत्तिराख्याता तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥

कुशूलधान्यको वा स्यात्कुम्भीधान्यक एव वा । त्र्यहैहिको वापि भवेदश्वस्तनिक एव वा ॥ मनु ४/१-७

अर्थात् याजन और अध्यापनसे और कोई केवल एक कामसे अर्थात् अध्यापनसे ही अपना निर्वाह करता है। शिलोञ्छ वृत्तिवालोंको उचित है कि अग्निहोत्र करै और केवल पर्व तथा अयनान्त इष्ट अर्थात् दर्श पौर्णमासादि यज्ञोंको सदा करते रहै।[40]सुखकी इच्छावाले गृहस्थ ब्राह्मण सन्तोषका अवलम्बन करके बहुत धनकी चेष्टा नही करे क्योंकि सन्तोषही सुखका मूल है और असन्तोष दुःखका कारण है।[41]दान लेने में समर्थ होनेपर भी सदा दान नही लियाकरे; क्योंकि दान लेनसे ब्राह्मणका ब्रह्मतेज नष्ट होताहै। बुद्धिमान् ब्राह्मणको उचित है कि बिना विशेष रूप से प्रतिग्रहके विधानको जानेहुए क्षुधासे पीड़ित होनेपर भी द्रव्य आदि दान नही लेवे।[42] ब्रह्मयोनिमें रत और अपने कर्मोंसे युक्त ब्राह्मणों को विधिपूर्वक अध्ययन आदि षट्कर्मों में तत्पर रहना चाहिये । वेदपढ़ाना, वेदपढ़ना, यज्ञकरना, यज्ञकराना, दान देना और दान लेना; ये ६ कर्म ब्राह्मणके है। इनमें यज्ञ कराना, वेद पढ़ाना और शुद्ध दान लेना, ये तीन कर्म उनकी जीविका है।[43] ब्राह्मणके कर्मोंमे

---

[40] चतुर्णामपि चैतेषां द्विजानां गृहमेधिनाम् । ज्यायान्परः परो ज्ञेयो धर्मतो लोकजित्तमः ॥

षट्कर्मैको भवत्येषां त्रिभिरन्यः प्रवर्तते । द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु ब्रह्मसत्रेण जीवति ॥ ९ ॥

वर्तयंश्च शिलोञ्छाभ्यामग्निहोत्रपरायणः । इष्टीपार्वायनान्तीयाः केवला निर्वपेत्सदा ॥ मनु ४/८-१० ॥

[41] सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत् । सन्तोषमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः ॥ मनु ४/ १२

[42] प्रतिग्रहसमर्थोऽपि प्रसङ्गं तत्र वर्जयेत् । प्रतिग्रहेण ह्यस्यांशु ब्राह्मं तेजः प्रशाम्यति ॥

न द्रव्याणामविज्ञाय विधिं धर्म्यं प्रतिग्रहे । प्राज्ञः प्रतिग्रहं कुर्यादवसीदन्नपि क्षुधा ॥ मनु ४/१८६ -८७॥

[43] ब्राह्मणा ब्रह्मयोनिस्था ये स्वकर्मण्यवस्थिताः । तं सम्यगुपजीयुः षट्कर्माणि यथाक्रमम् ॥

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा । दानं प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्माण्यग्रजन्मनः ॥

षण्णां तु कर्मणामस्य त्रीणि कर्माणि जीविका । याजनाध्यापने चैव विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः ॥ मनु४/७४-७६ ॥

वेदका अभ्यासकरना, क्षत्रियके कर्मोंमे प्रजाकी रक्षाकरना और वैश्यके कर्मों में कृषि, गोरक्षा और वाणिज्य श्रेष्ठ है। ब्राह्मणके प्रतिग्रह, याजन और अध्यापन कर्ममें प्रतिग्रह बहुत हीन है और परलोकके लिये निन्दित है।[44]जो ब्राह्मण यज्ञकेलिये दातासे धन लेकर उसको यज्ञकार्य में नही लगाताहै वह मरनेपर उस पापसे १०० वर्ष तक गीध अथवा काकपक्षी होता है।[45]जो ब्राह्मण अनापत्कालमे नित्य दोनो समय अग्निहोत्र नही करता उसको पुत्रहत्या के समान पाप लगता है; वह उस पापको छोड़ाने के लिये एकमास चान्द्रायण व्रत करे। जो ब्राह्मण शूद्रके द्रव्य से अग्निहोत्र करता है वह अज्ञानी है; वह शूद्र उसके शिरपर पांव रखकर नरकसे पार होताहै।[46]तपस्या और आत्मज्ञान ब्राह्मणका उत्कृष्ट मोक्षसाधन है तपसे पाप नष्ट होता है और आत्मज्ञानसे मुक्ति होती है ॥[47]स्नातक ब्राह्मणको उचित है कि वेद पाठके विरोधी विना विचारे जहां तहांसे तथा नाच अथवा गानवृत्तिसे धन सञ्चय नहीं करे, सदा सन्तोषसे रहे।[48]जो ब्राह्मण दानलेने में समर्थ होकर भी दान नहीं लेता है उसको दानशीलोंके समान लोक मिलता है ।[49] शौच, मङ्गल अर्थात्

---

[44] वेदाभ्यासो ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य च रक्षणम् । वार्त्ताकर्मैव वैश्यस्य विशिष्टानि स्वकर्मसु ॥

प्रतिग्रहाद्याजनाद्वा तथैवाध्यापनादपि । प्रतिग्रहः प्रत्यवरः प्रेत्य विप्रस्य गर्हितः । मनु १०/८०,१०९

[45] यज्ञार्थमर्थं भिक्षित्वा यो न सर्वं प्रयच्छति । स याति भासतां विप्रः काकतां वा शतं समाः ॥ मनु/११.२५ ॥

[46] अग्निहोत्र्यपविध्याग्नीन्ब्राह्मणः कामकारतः | चान्द्रायणं चरेन्मासं वीरहत्यासमं हि तत् ॥

तेषां सततमज्ञानां वृषलाग्न्युपसेविनाम् । पदामस्तकमाक्रम्य दाता दुर्गाणि संतरेत् ॥ मनु ११/ ४२-४३

[47] तपो विद्या च विप्रस्य निःश्रेयसकरं परम् | तपसा किल्विषं हन्ति विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥मनु १२/१०४ ॥

[48] न स्वाध्याय विरोध्यर्थमीहत न यतस्ततः । न विरुद्धप्रङ्गेन सन्तोषी च सदा भवेत् ॥ याज्ञवल्क्य स्मृति२/ १२९ ॥

[49] प्रतिग्रहसमर्थोपि नादत्ते यः प्रतिग्रहम् | ये लोका दानशीलानां स तां नाप्नोति पुष्कलान् ॥ याज्ञवल्क्य स्मृति २१३ ॥

उत्तम आचरण, परिश्रम करना, परके गुणोमें दोपोंका नहीं देखना, कामना रहित होना, इन्द्रियोंको वश में रखना, दान देना और दयाकरना, ये सब ब्राह्मणके लक्षण है।[50]ब्राह्मण तप और अग्निहोत्र करनेसे अग्निके समान प्रकाशित होते है, परन्तु दान लेनेसे ऐसे तेज-हीन होजाते हैं जैसे जलसे अग्नि, किन्तु श्रेष्ठ ब्राह्मण प्राणायामद्वारा प्रतिग्रहजनित दोषको ऐसे नाश करदेते हैं जैसे वायु मेघोंको उड़ा देता है।[51]ब्राह्मणको उचित है कि विना (कुल शील आदि) जाने हुए किसी मनुष्यको यज्ञ नहीं करावे, विद्या नही पढावे तथा जनेऊ नही देवे ।[52] ब्राह्मण बिना प्रणाम कियेहुए शुद्रको आशीर्वाद देता है वह उस शूद्रके सहित नरकमें जाता है।[53] महर्षि पराशर जे अनुसार कलियुगके गृहस्थका कर्म आचार और चारों वर्ण चारो आश्रमोंका साधारण धर्म, इस प्रकार है - अपने ६ कर्मोंमें निरत ब्राह्मण खेती करावे भूखे, प्यासे, थके, अङ्गहीन, रोगी और नपुंसक (बधिया किये) बैलोंको हलमे नही लगावे । सब अङ्गासे युक्त, रोग रहित, तृप्त, बलदर्पित और बिना बधिया किये हुए बैलोंको आधे दिन तक हलमें जोतकर स्नान करै। इसके पश्चात् जप, देवपूजा, होम और वेदपाठका अभ्यास करे और एक, दो, तीन अथवा चार स्नातक ब्राह्मणोंको

[50] शौचं मङ्गलमायास अनसूयास्पृहा दमः | लक्षणानि च विप्रस्य तथा दानं दयापि च ॥ अत्रि स्मृति ३३ ॥

[51].. पावका इव दीप्यन्ते तपोहोमैर्द्विजोत्तमाः ॥

प्रतिग्रहेण नश्यन्ति वारिणा इव पावकः । तान् ते प्रतिग्रहजान्दोषान्प्राणायामैर्द्विजोत्तमाः ॥

....। नाशयन्ति हि विद्वांसो वायुर्मेघानिवाम्बरे ॥ अत्रि स्मृति१४१-४३ ॥

[52] नापरीक्षितं याजयेत् ।नाध्यापयेत्। नोपनयेत्। बृहद्विष्णुस्मृति ४-६

[53]............गते शूद्रे स्वस्ति कुर्वन्ति ये द्विजाः ॥...... शूद्रोपि नरकं याति ब्राह्मणोपि तथैव च ॥ आंगिरस स्मृति ४९,५०

भोजन करावे।[54]अपने जोते खेतके उपार्जित अन्नसे पश्चयज्ञ करे और यज्ञादिकोंको करावे। तिल और रसोंको नही वेचे, अन्न, तृण और काष्ठको बेचे, ब्राह्मण की ऐसी वृत्ति है। खेतीकरनेवाले ब्राह्मणको महादोष लगता है; ८ बैलोंका हल धर्मका, ६ बैलों का हल जीविका करनेवालोका, ४ बैलोंका हल निर्दयीका और २ बैलोंका हल गोहत्यारेका है। दो बैलवाले हलको चौथा दिन, ४ बैलवाले हलको आधा दिन, ६ बैलवाले हलको ३ पहर और ८ बैलवाले हलको दिनभर जोतनेसे द्विज नरकमे नही जाते है। इन ब्राह्मणों को स्वर्ग देनेवाला उत्तम दान देना चाहिये । जो पाप एक वर्ष मछली मारनेवालेको होता है वही पाप एक दिन हल जोतनेवालेको लगता है। फांसी देनेवाला, मत्स्यधाती, मृगादिकका हिसक व्याधा, पक्षीका घातक और अदाता, हलचलानेवाला; ये पांचों एकसमान पापी है।[55]खेतके अन्नको काटने, भूमिको जोतने कोड़ने और कृमि तथा कीड़ोंके मरनेसे

---

[54] अतः परं गृहस्थस्य कर्माचारं कलौ युगे | धर्म साधारण शक्त्या चातुर्वर्ण्याश्रमागतम् ॥

तं प्रवक्ष्याम्यहं पूर्व पाराशरवचो यथा । षट्कर्मनिरतो विप्रः कृषिकर्माणि कारयेत् ॥

क्षुधितं तृषितं श्रान्तं बलीवर्द्दं न योजयेत् । हीनाङ्गं व्याधितं क्लीवं वृषं विप्रो न वाहयेत् ॥

स्थिराङ्गं नीरुजं तृप्तं सुनर्द्दं षण्ढवर्जितम् । वाहयेद्दिवसस्यार्द्धं पश्चात् स्नानं समाचरेत् ॥

जपं देवार्चनं होमं स्वाध्यायं चैवमभ्यसेत् ॥ एकद्वित्रिचतुर्विप्रान्भोजयेत्स्नातकान्द्विजः ॥पराशर स्मृति २/१-५

[55] स्वयंकृष्टे तथा क्षेत्रे धान्यैश्च स्वयमर्जितैः । निर्वपेत्पञ्चयज्ञांश्च क्रतुदीक्षां च कारयेत् ॥

तिला रसा न विक्रेया विक्रेया धान्यतःसमाः । विमस्यैवंविधा वृत्तिस्तृणकाष्ठादि वैक्रयः ॥

ब्राह्मणश्चेत्कृषिं कुर्यात्तन्महादोषमाप्नुयात् । अष्टागवं धर्महलं पङ्गवं वृत्तिलक्षणम् ॥

चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवं गोजिघांसुवत् । द्विगवं वाहयेत्पादं मयाहन्तु चतुर्गवम् ॥

षड्गवं तु त्रियामाहेऽष्टभिः पूर्णे तु वाहयेत् । न याति नरकेष्वेवं वर्त्तमानस्तु वै द्विजः ॥

खेतिहरको जो पाप लगता है वह खलयज्ञ अर्थात् खलिहानका यज्ञ करनेसे छूट जाता है।[56] अन्नका छठा भाग राजाको, २१ वां भाग देवताओंको और ३० वां भाग ब्राह्मणोंको देनेसे वह सब पापोंसे छूटता है।[57] जो ब्राह्मण अग्निहोत्र, सन्ध्योपासना और वेदविद्यासे हीन हैं वे शूद्र कहे जाते हैं इसलिये ब्राह्मणको उचित है कि यदि सम्पूर्ण वेदोंको नहीं पढ़सके तो वेदका एक भाग अवश्य पढ़लेवे।[58]जो ब्राह्मण दक्षिणाकेलिये शूद्रकी हविका

दानं दद्याच्च वै तेपां प्रशस्तं स्वर्गसाधनम् । संवत्सरेण यत्पापं मत्स्यघाती समाप्नुयात् ॥

जयोमुखेन काष्ठेन तदेकाहेन लाङ्गली । पाशको मत्स्यघाती च व्यावः शाकुनिकस्तथा ॥

अदाता कर्षकश्चैव पञ्चते समभागिनः ॥ पराशर स्मृति २/६-१२

[56] खलयज्ञ को करनेसे द्विजाति सब पापोंसे मुक्त हो स्वर्गको प्राप्त करते हैं । खलिहान में चारों दिशासे सघन घेरा बनावै, वह चारोंओरसे ढँपा रहे, उसमें एक द्वार रहे । उसमें प्रवेश करते हुए गदहे, ऊँट, बकरे तथा भेड़को नहीं रोके । कुत्ते, सूअर, सियार, काक, उलूक, तथा कबूतरको तीनों कालमें प्रोक्षणजलसे प्रोक्षण करे और भस्म तथा ' जलधारासे रक्षा करे । महर्षि पराशरको स्मरण करते हुए तीनों कालमें हलके फारकी पूजा करे । खलिहान में रहकर प्रेत, भूतादिकोंका नाम नहीं लेवे । सूतिकागृह के समान वहां चारोंओरसे रक्षा करे; क्योंकि रक्षा नहीं करनेसे राक्षस सब हरलेते हैं । अच्छेदिनके पूर्वाह्न अथवा पराहके सन्धिमें हलके फारकी पूजा करके अन्नको तौले । वहां रौहिणकाल में (दो पहर दिनसे थोड़ बाद) भिक्षासे यज्ञकरे । वहां जो कुछ भक्तिसे दिया जाता है वह सब अक्षय होता है । उस समय ऐसा कहे कि पूर्वकालमें ब्रह्माने खलयज्ञका दक्षिणा बनाया था, इस मेरे दक्षिणाको भागधेयरूपकर ग्रहण करो। इन्द्रादिकदेवता, सोमपादिक पितर, सनकादिक, मनुष्य और जो कोई दक्षिणाशी हैं उनके उद्देशसे प्रथम ब्रह्मणको, उसके पश्चात् अन्य याचकको और उसके बाद शिल्पीको और दीन, अनाथ, कोढी, कुशरीरी, नपुंसक, अन्ध, बधिर आदिको देवे । पतितवर्णों को देकर भूतोंको तर्पण करे । चण्डाल, श्वपाक आदि सभी को यथाशक्ति देकर मीठे वचनसे उनको विसर्जन करे उसके पश्चात् अन्नको घरमें लेजाकर वहां आभ्युदयिक श्राद्ध करे। बृहत्पाराशरधर्मशास्त्र - ३/१०९-१२३

[57] वृक्षं छित्त्वा महीं भित्त्वा हत्त्वा च कृमिकीटकान् ॥ कर्षकः खलयज्ञेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

दत्त्वा तु षड्भागं देवानां चैकविंशकम् ॥ विप्राणां त्रिंशकं भागं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ प०स्मृति २/१५-१८

[58] अग्निकार्यात्परिभ्रष्टाः सन्ध्योपासनवर्जिताः । वेदं चैवानधीयानाः सर्वे ते वृषलाः स्मृताः ॥

तस्माद् वृषलभीतेन ब्राह्मणेन विशेषतः । अध्येतव्योप्येकदेशो यदि सर्वं न शक्यते ॥

पराशर स्मृति १२/२९-३०

हवन करता है; वह शूद्र हो जाता है और वह शूद्र ब्राह्मण होता है।[59] ब्राह्मणको उचित है कि धर्मपूर्वक धन उपार्जन करनेवालोंको यज्ञ करावे और ऐसे ही लोगोंसे दान लेवे।[60]ब्राह्मणों को उचित है कि दिनके प्रथम भाग में सन्ध्या आदि सम्पूर्ण कार्य करके दूसरे भागमें वेदका अभ्यास करें। उनके लिये वेदका अभ्यास परम तपस्या और षडङ्गसहित वेदका अभ्यास ब्रह्मयज्ञ है। वेदका अभ्यास ५ प्रकारका है, १ वेदका स्वीकार, २ वेदका विचार, ३ वेदका अभ्यास, ४ वेदका जप और ५ वेदका दात॥[61] ब्राह्मण वेदका अभ्यास करे; शिष्योंको पढावे और पोष्यवर्ग के लिये यथा उचित अन्न आदि . याचना करै। माता, पिता, गुरु, भार्या, पुत्र, शिष्य, अभ्यागत और अतिथि, ये सब पोष्यवर्ग कहे जाते हैं।[62]

ब्राह्मणके लिये योग्य दान/प्रतिग्रह

दान लेना मात्र ब्राह्मणों का धर्म है। अन्य द्विजों को दान लेने का अधिकार नहीं है। दान देने का अधिकार तो सब द्विजों को है, किन्तु दान लेना केवल ब्राह्मण को बताया है ययाति

[59] दक्षिणार्थं तु यो विप्रः शूद्रस्य जुहुयाद्विः । ब्राह्मणस्तु भवेच्छूद्रः शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ॥

पराशर स्मृति १२/३६

[60] एतैरेव गुणैर्युक्तं धर्मार्जितधनं तथा । याजयीत सदा विप्रो ग्राह्यस्तस्मात्प्रतिग्रहः ॥ शंख स्मृति१२/१९

[61] दिवसस्याद्यभागे तु सर्वमेतद्विधीयते । द्वितीये चैव भागे तु वेदाभ्यासो विधीयते ॥

वेदाभ्यासो हि विप्राणां परमं तप उच्यते । ब्रह्मयज्ञः स विज्ञेयः षडङ्गसहितस्तु यः ॥

वेदस्वीकरणं पूर्व विचारोऽभ्यसनं जपः | प्रदानं चैव शिष्येभ्यो वेदाभ्यासो हि पञ्चधा ॥ दक्ष स्मृति२/२८-३०

[62] ततश्चैवाभ्यसेद्वेदं शिष्यानध्यापयेदय | पोष्यवर्गार्थमन्नादि याचयेत यथोचितम् ॥

माता पिता गुरुर्भार्या पुत्रः शिष्यस्तथैव च । अभ्यागतोऽतिथिश्चैव पोष्यवर्ग इति स्मृतः ॥ लघु आश्वलायन १/७३-७४

और अष्टक में जब संवाद हुआ तो अष्टक ने ययाति से कहा कि स्वर्ग लोक में जो लोक विद्यमान हैं, वे सब आपको देता हूँ तथा अन्तरिक्ष या द्युलोक में मेरे लिये जो स्थान हैं, उनमें आप शीघ्र ही मोह रहित चले जाँय। तब ययाति ने कहा कि "ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण ही प्रतिग्रह लेता है। मेरे जैसा क्षत्रिय कदापि नहीं। क्षत्रियों को दान करना चाहिये, लेना नहीं।"[63] ययाति ने अष्टक से कहा कि जो ब्राह्मण नहीं है उसे दीन याचक बनकर कभी जीवन नहीं बिताना चाहिये। याचना तो विद्या से दिग्विजय करने वाले विद्वान ब्राह्मण की पत्नी है। अर्थात् ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण को ही याचना करने का अधिकार है।[64]

वशम्पायन जी ने मार्कण्डेय जी से दान देने से प्राप्त सुख तथा स्वर्ग के विषय में पूछा कि किन अबस्थाओं में दान देकर मनुष्य इन्द्रलोक का सुख भोगता है। मार्कण्डेय जी ने कहा कि सोलह प्रकार के दान व्यर्थ हैं। (१) संन्यास आश्रम से फिर गृहस्थ आश्रम आये हुए पतित को दिया हुआ दान व्यर्थ है। (२) अन्याय से कमाये हुए धन का दान व्यर्थ है। (३) पतितब्राह्मण (४) चोर को दिया हुआ दान व्यर्थ है । (५) आदि गुरुजनों को दिया हुआ दान व्यर्थ है क्योंकि इनकी सेवा करना मनुष्य का कर्तव्य है। (६) मिथ्यावादी (७) पापी । (८) कृतघ्न (९) ग्राम पुरोहित (१०) वेद विक्रय करने वाले । (११) शूद्र से यज्ञ कराने वाले । (१२) नीच ब्राह्मण । (१३) शूद्रा के पति ब्राह्मण (१४) साँप को पकड़ कर व्यवसाय करने वाले । (१५) सेवकों को। (१६) स्त्री समूह को दिया

---

[63] नास्मद्विधो ब्राह्मणो ब्रह्मविच्च प्रतिग्रहे वर्तते राजमुख्य ।

यथा प्रदेयं सततं द्विजेभ्य स्तयाददं पूर्वमहं नरेन्द्र॥ म०भा० आदिपर्व ६२.१२

[64] ना ब्राह्मणः कृपणो जातु जीवेद् याश्चापि स्याद् ब्राह्मणी वीरपत्नी ।

सोऽहं नवाकृतपूर्वं चरेयं विधित्समानः किमु तत्र साधु ॥ म०भा० आदिपर्व ९२.१२

हुआ दान व्यर्थ है । इस प्रकार ये सोलह दान निष्फल बताये हैं। इसी प्रकार सेवकों और स्त्रियों का पालन-पोषण करना तो मनुष्य का कर्तव्य है ही। इसलिये वह उनको देना दान की श्रेणी में नहीं है।

ब्राह्मणको उचित है कि यदि कोई मनुष्य काठ, जल, मूल, फल, अन्न, मधु अथवा अभयदान बिना मांगे हुए स्वयं लाकर रख देवे तो उसको लेलेवे। ब्रह्माने कहा है कि दुष्कृत कर्म करनेवाले भी यदि बिना पहिले कुछ कहे हुए तथा बिना मांगेहुए अपनी इच्छासे भिक्षा लाकर रखदेवें तो उसे अवश्य लेलेवे; क्योंकि जो ब्राह्मण ऐसी भिक्षाको नहीं लेता है १५ वर्ष तक उसके पितरगण उसके दिये हुए कव्यको नहीं भोजन करते और अग्नि उसके हव्यको नहीं ग्रहण करते हैं ।[65] गुरुजन (पिता माता आदि) और भृत्यगण (स्त्री, पुत्र, सेवक आदि) के भरण पोषण के लिये और देवताओं तथा अतिथियों के पूजनके निमित्त ब्राह्मण सबसे दान लेसकता है किन्तु अपने भोजन के लिये नहीं। जो ब्राह्मण माता पिताके मरनेपर अथवा उनके जीते हुए पृथक् भावसे बसते हैं, उनको अपनी जीविका के लिये उत्तम लोगोंसे ही दान लेना चाहिये।[66]ब्राह्मण निजकर्मों में तत्पर द्विजातियों के घर भोजन करें और उन्हींसे दान लेवें; किन्तु पितर, देवता और गुरुके कार्य

[65] एधोदकं मूलफलमन्नमभ्युद्यत च यत् । सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्मध्वथाभयदक्षिणाम् ॥

आहृताभ्युद्यतां भिक्षां पुरस्तादमचोदिताम् । मेने प्रजा पतिग्रह्यामपि दुष्कृतकर्मणः ॥

नाश्नन्ति पितरस्तस्य दश वर्षाणि पञ्च च । न च हव्यं वहत्यग्निर्यस्तामभ्यवमन्यते ॥ मनु/२४७-२४९

[66] गुरून्भृत्यांश्चोज्जिहीर्षन्नर्चिष्यन्देवतातिथीन् । सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्न तु तृप्येत्स्वयं ततः ॥

गुरुषु त्वभ्यतीतेषु विना वागृहे वसन् । आत्मनो वृत्तिमन्विच्छन्गृह्णीयात्साधुतः सदा ॥ मनु ४/२५१-५२

के लिये तथा निज-भृत्योंके भरणपोषणके निमित्त काष्ठ, जल, भूसा, मूल, फल, मधु, अभयदान, नयी शय्या, आसन, घर, सवारी, दूध, दही, भुना अन्न, यव, ककुनी, फूलकी माला, मार्ग और शाक सबसे लेलेवें; किन्तु यदि अन्य कोई जीविका हो तो शूद्रोंसे ले; वर्णसङ्करसे न लेवे ॥[67]ब्राह्मणको उचित है कि कन्याके विवाह और इतर धर्मकार्यों के लिये शूद्रसे भी धन लेवे और अन्य कार्योंके लिये बहुत पशुवाले शूद्रसे, सौ गौवाले हीनकर्म करनेवालेसे, हजार गौवाले अग्निहोत्रसे हीन द्विजसे अथवा सोमपान करनेवालेसे द्रव्य लेवे।[68]ब्रह्माने कहा है कि यदि दुष्कृतकर्म करनेवाले भी बिना सूचनाके अकस्मात् भोजनकी वस्तु लाकर रखदेवें तो उसके लेनेमें कुछ दोष नहीं है। जो ऐसा अयाचित-भिक्षा ग्रहण नहीं करता है उसके घर १५ वर्ष तक पितरगण नहीं खाते और उसका हव्य अग्नि ग्रहण नहीं करते; किन्तु चिकित्सक, व्याध, शूल हाथ में लिये हुए हत्यारा नपुंसक और व्यभिचारिणी-स्त्रीका अयाचित अन्न भी नहीं लेना चाहिये।[69]

ब्राह्मणका आपत्कालीन धर्म

विद्वान् ब्राह्मणको उचित है कि श्राद्ध आदि पञ्चयज्ञों से हीन शूद्रका पकाया हुआ अन्न भोजन नहीं करे; किन्तु क्षुधासे पीड़ित होनेपर एक रातके निर्वाहके योग्य उससे कच्चा

---

[67] प्रशस्तानां स्वकर्मसु द्विजातीनां ब्राह्मणो भुञ्जीत,प्रतिगृह्णीयाच्चैधोदयवसमूलफलमध्यभयाभ्युद्यत- प्रतिशय्यासनावसथयानपयोदधि-धानाशफरिप्रियङ्गुस्रकुमार्गशाकान्यप्रणोद्यानि सर्वेषां पितृदेवगुरुभृत्यभरणे चान्यवृत्तिश्चेन्नान्तरेण शूद्रान् ॥ गौतमस्मृति १७/१

[68] द्रव्यादानं विवाहसिद्ध्यर्थं धर्मतन्त्रप्रसंगे चशूद्रादन्यत्रापि, शूद्राद्बहुपशोर्हीनकर्मणः शतगोरनाहिताग्नेः सहस्रगोर्वा सोमपात्।गौतमस्मृति १७/१

[69] उद्यतामाहतां भिक्षां पुरस्तादमचोदिताम् । भोज्यां प्रजापतिर्मेने अपि दुष्कृतकारिणः ॥

न तस्य पितरोऽश्नन्ति दशवर्षाणि पञ्च च । न च हव्यं वहत्यग्निर्यस्तामभ्यवमन्यते ॥

चिकित्सकस्य मृगयोः शल्यहस्तस्य पापिनः । षण्ढस्य कुलटायाश्च उद्यतापि न गृह्यते ॥ वशिष्ठ स्मृति१४/२३-१६

अन्न लेलेवे[70]ब्राह्मण यदि अपने कर्मोंसे अपनी जीविका न चलासके तो क्षत्रियके कर्मसे जीविका करे; क्यों कि यही उसकी निकट वृत्ति है। जब निजवृत्ति और क्षत्रियकी वृत्तिसे भी ब्राह्मणकी जीविका नहीं चलसके तो खेती पशुरक्षा आदि वैश्यके कर्मसे वह अपना निर्वाह करे।ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय यदि वैश्यवृत्ति अवलम्बन करें तो वैश्यकी वृत्तियोंमेंसे कृषिकर्मको, जो अति हिंसा युक्त और बैल, आदि पशुओंके आधीन है, यत्नपूर्वक छोड़दें। कोई कोई खेतीको श्रेष्ठ कहते हैं; किन्तु यह वृत्ति सज्जनोंद्वारा निंन्दित है; क्योंकि उसके करनेमें हल, कुदाल आदिसे भूमिको खोदने में भूमिके जीवोंकी हिंसा होती है।[71]निज वृत्तिका अभाव तथा निज धर्म पालन में असमर्थ होनेपर ब्राह्मण और क्षत्रिय नीचे लिखी हुई वस्तुओंका क्रय विक्रय छोडकर वैश्य वृत्तिके व्यापारसे अपनी जीविका करें। सब प्रकारके रस पकाहुआ अन्न, तिल, पत्थर, लवण, पशु, मनुष्य, सूतसे बनेहुए लालवस्त्र, विना लाल रंगके भी सणके बने वस्त्र तीसी(अलसी) की छालके वस्त्र और कम्बल, फल, मूल, औषधी, जल, शस्त्र, विष, मांस, सोमरस, सब प्रकारकी सुगन्धित वस्तु, दूध, मोम, दही, घी, तैल, मधु, गुड, कुश, सब प्रकारके बनैले पशु, दांतवाले जानवर, पक्षी, मद्य, नील लाह और घोडे आदि १ खुरवाले पशुका क्रय विक्रय नहीं करे।[72]

---

[70] नाद्याच्छूद्रस्य पक्वान्नं विद्वानश्राद्धिनो द्विजः । आददीताममेवास्मादवृत्तावेकरात्रिकम् ॥मनु ४/२२

[71] अजीवंस्तु यथोक्तेन ब्राह्मणः स्वेन कर्मणा | जीवेत्क्षत्रियधर्मेण स ह्यस्य प्रत्यनन्तरः ॥

उभाभ्यामप्यजीवंस्तु कथं स्यादिति चेद्भवेत् । कृषिगोरक्षमास्थाय जीवेद्वैश्यस्य जीविकाम् ॥

वैश्यवृत्त्यापि जीवंस्तु ब्राह्मणः क्षत्रियोऽपि वा । हिंसाप्रायां पराधीनां कृषिं यत्नेन वर्जयेत् ॥

कृषि साध्विति मन्यन्ते सा वृत्तिः सद्विगहता । भूमिं भूमिशयांश्चैव हन्ति काष्ठमयोमुखम् ॥ मनु १०/८१-८४

[72] इदन्तु वृत्तिवैकल्यात्त्यजतो धर्मनैपुणम् । विट्पण्यमुद्धृतोद्धारं विक्रेयं वित्तवर्द्धनम् ॥

कृषक अपने खेत में उत्पन्न पवित्र तिलको धर्मकार्य के निमित्त इच्छानुसार बेंच सकता है; किन्तु लाभकी इच्छासे बहुत दिनोंतक रखके नहीं बेंचे। जो मनुष्य भोजन, उबटना और दानके सिवाय तिलको अन्य व्यवहारमें लाता है वह पितरोंके सहित कुत्तेकी विष्ठाका कीड़ा होता है। ब्राह्मण मांस, लाह, और नमक बेंचनेसे उसी क्षण पतित होजाता है; तीनदिन तक दूध बेचनेसे शूद्र बन जाता है तथा इच्छा पूर्वक ७ दिनतक ऊपर कहेहुए रस आदि निषिद्ध वस्तुओंको बेचनेसे वैश्य होजाता है।[73] जो ब्राह्मण ब्राह्मणकी वृत्तिसे निर्वाह न होनेपर भी वैश्यकी वृत्तिका अवलम्बन नहीं करके अपनी निजवृत्तिमें स्थित रहता है वह नीचे कहे हुए धर्मको करे ॥ १०१ ॥ ऐसा विपद्ग्रस्त ब्राह्मण सब लोगोंसे दान लेलेवे; जो स्वयं पवित्र है वह दोषसे दूपित होगा ऐसा धर्मशास्त्रानुसार सिद्ध नहीं हो सकता ॥ १०२ ॥ ब्राह्मण स्वभावसे ही जल और अग्नि के समान पवित्र हैं; आपत्कालमें निन्दितपुरुपोंके पढ़ाने, यज्ञकराने तथा उनसे दान लेनेसे उनको पाप नहीं लगता ॥ १०३ ॥ यदि प्राणसङ्कटकी सम्भावनामें ब्राह्मण किसीका अन्न लेवे तो जैसे आकाशमें कीच नहीं स्पर्श

सर्वान्रसानपोहेत कृतान्नञ्च तिलैः : सह । अश्मनो लवणञ्चैव पशवो ये च मानुषाः ॥

सर्वश्च तान्तवं रक्तं शाणक्षौमाविकानि च | अपि चेत्स्युररक्तानि फलमूले तथौषधीः ॥

अपः शस्त्रं विषं मांसं सोमं गन्वांश्च सर्वशः । क्षीरं क्षौद्रं दधि घृतं तैलं मधु गुडं कुशान् ॥

आरण्यांश्च पशून्सर्वान्दष्ट्रिणश्च वयांसि च । मद्यं नीलीं च लाक्षां च सर्वांश्चैकशफांस्तथा ॥ मनु १०/८५-८९

[73] काममुत्पाद्य कृष्यां तु स्वयमेव कृषीवलः । विक्रीणीत तिलाञ्शुद्धान्धर्मार्थमचिरस्थितान् ॥

भोजनाभ्यञ्जनाद्दानाद्यदन्यकुरुते तिलैः । कृमिभूतः श्वविष्ठायां पितृभिः सह मज्जति ॥

सद्यः पतति मांसेन लाक्षया लवणेन च । त्र्यहेण शूद्रो भवति ब्राह्मण क्षीरविक्रयात् ॥

इतरेषां तु पण्यानां विक्रयादिह कामतः । ब्राह्मणः सप्तरात्रेण वैश्यभावं नियच्छति ॥मनु १०/८५-८९

करता है वैसे उसको पाप नहीं लगता है ॥ १०४ ॥ भूखसे पीड़ित होकर अजीगर्त्तऋषि अपने पुत्रको मारनेको उद्यत हुए थे; किन्तु क्षुधा निवृत्त करनेके कारण ऐसा करनेसे वह पापसे लिप्त नहीं हुए ॥ १०५ ॥ धर्म अधर्मको जाननेवाले वामदेवऋषि प्राणरक्षाकेलिये कुत्तेका मांस खानेके अभिलाषी हुएथे तब भी उनको पाप नहीं लगा ॥ १०६ ॥ महातपस्वी भरद्वाज मुनिने पुत्रके सहित निर्जनवन में क्षुधासे पीड़ित होकर वृधु नामक बढ़ईसे बहुतसी गौदान स्वरूप ली थी ॥ १०७ ॥ धर्म अधर्मके जाननेवाले विश्वामित्रने भूखसे पीड़ित होकर चण्डालसे कुत्तेका मांस लेकर खानेकी इच्छा कीथी , तब भी वे दोषी नहीं हुए ॥ १०८ ॥[74]ब्राह्मण उपनयन संस्कारसे युक्त द्विजातियोंके याजन और अध्यापन कार्य सदा करावे परन्तु आपत्कालमें निकृष्टजाति शूद्रका भी प्रतिग्रह ले लेवे।[75]यदि ब्राह्मणको ६बेला अर्थात् ३दिन उपवास होजावे तो ७वीं बेलामें हीनकर्मकरनेवाले मनुष्यके खलिहान, खेत अथवा घरसे चोरी करके एकबार भोजन करनेयोग्य वस्तु लेलेवे;

---

[74] वैश्यवृत्तिमनातिष्ठन्ब्राह्मणः स्व पथि स्थितः । अवृत्तिकर्षितः सीदन्निमं धर्म समाचरेत् ॥

सर्वतः प्रतिगृह्णीयाद्ब्राह्मणस्त्वनयं गतः । पवित्रं दुष्यतीत्येतद्धर्मतो नोपपद्यते ॥

नाध्यापनाद्याजनाद्वा गर्हिताद्वा प्रतिग्रहात् । दोषो भवति विप्राणां ज्वलनाम्बुसमा हि ते ॥

जीवितात्ययमापन्नो योऽन्नमत्ति यतस्ततः । आकाशमिव पङ्केन न स पापेन लिप्यते ॥

अजीगर्तः सुतं हन्तुमुपासर्पद्बुभुक्षितः । न चालिप्यत पापेन क्षुत्प्रतीकारमाचरन् ॥

श्वमांसमिच्छन्नार्तोऽत्तुं धर्माधर्मविचक्षणः । प्राणानां परिरक्षार्थं वामदेवो न लिप्तवान् ॥

भरद्वाजः क्षुधार्तस्तु सपुत्रो विजने वने । बह्वीर्गाः प्रतिजग्राह वृधोस्तक्ष्णो महातपाः ॥

क्षुधार्तश्चात्तुमभ्यागाद्विश्वामित्रः श्वजाघनीम् । चण्डालहस्तादादाय धर्माधर्मविचक्षणः ॥मनु १०/१०१-१०८

[75] याजनाध्यापने नित्यं क्रियेते संस्कृतात्मनाम् । प्रतिग्रहस्तु क्रियते शूद्रादप्यन्त्यजन्मनः ॥ मनु १०/११०

किन्तु धनके स्वामीके पूछने पर चुरानेका सच्चा कारण बता देवे ।[76]जो द्विज़ अनापत्कालमें भी आपत्कालका धर्म करता है उसको परलोक में उस धर्मका कुछ फल नहीं मिलता है।[77]ब्राह्मण आपत्काल में क्षत्रिय अथवा वैश्यका कर्म करके अपना निर्वाह करे; किन्तु आपत्से पार होनेपर प्रायश्चित्तसे पवित्र होकर फिर अपनी वृत्ति ग्रहण कर लेवे।[78]यदि ब्राह्मण आपत्कालमें शूद्रके घर भोजन १०० **द्रुपदादिव** मन्त्र जपनेसे शुद्ध होजाता है। [79]प्राणजाने का संशय होनेपर ब्राह्मण शस्त्र धारण अर्थात् क्षत्रियका कर्म और क्षत्रिय वैश्यका कर्म करे। [80] अपनी रक्षाके लिये अथवा वर्णसंकर होनेसे लोगोंको बचाने के लिये ब्राह्मण वैश्यको भी शस्त्र ग्रहण करना चाहिये।[81]क्षत्रिय अपने बाहु बलसे, वैश्य और शूद्र धनसे और ब्राह्मण जप और होमके बलसे आपत्काल पार होवें।[82]

ब्राह्मणके लिये भक्ष्याभऽक्ष्य

---

[76] तथैव सप्तमे भक्ते भक्तानि षडनश्नता । अश्वस्तनविधानेन हर्त्तव्यं हीनकर्मणः ॥

खलात्क्षेत्रादगाराद्वा यतो वाप्युपलभ्यते । आख्यातव्यं तु तत्तस्मै पृच्छते यदि पृच्छति ॥ मनु ११/१६-१७

[77] आपत्कल्पेन यो धर्मं कुरुतेऽनापदि द्विजः । स नाप्नोति फलं तस्य परत्रेति विचारितम् ॥ मनु ११/२८

[78] क्षात्रेण कर्मणा जीवेद्विशां वाप्यापदि द्विजः । निस्तीर्य तामथात्मानं पावयित्वा न्यसेत्पथि ॥याज्ञवल्क्य ३/३५

[79] .... । आपत्काल तु विप्रेण भुक्तं शूद्रगृहे यदि ॥

मनस्तापेन शुद्ध्येत् द्रुपदां वा शतं जपेत्। आपस्तम्ब स्मृति ८/१९-२०

[80] प्राणसंशये ब्राह्मणोऽपि शस्त्रमाददीत् राजन्यो वैश्यकर्म ॥ गौतम स्मृति ७/ ३

[81] आत्मत्राणे वर्णसङ्करे वा ब्राह्मणवैश्यौ शस्त्रमाददीयाताम् ॥ वशिष्ठ स्मृति३/२६

[82] क्षत्रियो बाहुवीर्येण तरेदापदमात्मनः । धनेन वैश्यशुद्रौ तु जपैहोमैर्द्विजोत्तमः ॥ वशिष्ठ स्मृति २६/१७

ब्राह्मणको उचित है कि जिस यज्ञका करानेवाला अश्रोत्निय है, तथा बहुतोंको यज्ञ करानेवाला है, स्त्री अथवा नपुंसक है उस यज्ञमें कभी नहीं भोजन करे । मतवाले, क्रोधी और रोगीका अन्न; केश अथवा कीटसे दूपित अन्न; पैरसे हुआ हुआ अन्न; भ्रूणघातीका देखा हुआ, रजस्वला स्त्रीका छुआ हुआ, पक्षीका खाया हुआ, कुत्तेका स्पर्श किया हुआ और गौका सूँघाहुआ अन्न खानेवाला हो, सो आवै ऐसा पुकार के दियाहुआ, समूह सन्यासी और भिक्षुक लोगोंका, वेश्याका और पण्डितों द्वारा निन्दित अन्न चोर, गवैया, बढई, व्याज लेनेवाले ब्राह्मण, दीक्षित, कृपण और बेडीसे बँधाहुआ मनुष्यका अन्न कभी नहीं खावे ।[83]दोषी, नपुंसक, व्यभिचारिणी स्त्री और छलधर्मीका अन्न; स्वादरहित, बासी और जूठा अन्न; शुद्रा वैद्य, व्याध, क्रूरपुरुष, जूठा खानेवाले, उग्र और दशदिनतक सूतिकाका अन्न; पंक्ति से किसीके उठजानेपर उस पंक्तिका अन्न, वृथामांस, अवज्ञापूर्वक दिया अन्न, पति और पुत्नसे हीन स्त्रीका अन्न, द्वेषीका अन्न, नगरकी पञ्चायतका अन्न,

---

[83] नाश्रोत्नियतते यज्ञे ग्रामयाजिकृते तथा । स्त्निया क्लीवेन च हुते भुञ्जीत ब्राह्मणः क्वचित् ॥

मत्तक्रुद्धातुराणाञ्च न भुञ्जीत कदाचन । केशकीटावपन्नञ्च पदा स्पृष्टश्च कामतः ॥

भ्रूणघ्नावेक्षितञ्चैव संस्पृष्टञ्चाप्युदक्यया | पतत्निणावलीढञ्च शुना संस्पृष्टमेव च ॥

गवां चान्नमुपघातं घुष्टान्नञ्च विशेषतः । गणान्नं गणिकान्नञ्च विदुषा च जुगुप्सितम् ॥

स्तेनगायकयोश्चान्नं तक्ष्णो वार्धुपिकस्य च । दीक्षितस्य कदर्यस्य बद्धस्य निगडैरथ ॥

मनु ४/२०५-१०

पतितका अन्न और छींक पड़ा हुआ अन्न कभी नहीं भोजन करे। झूठा और यज्ञका फल बेचनेवालेका अन्न, नट, दरजी, कृतघ्न, लोहार, निषाद, तमासाकरनेवाले, सोनार, वेण, शास्त्र बेचनेवाले, कुत्तापालनेवाले, सुरा बेचनेवाले, धोबी, रङ्गरेज, निठुर, जिसके घरमें जारपुरुष रहता हो, जो जारपुरुषको घरमें रहते जानकर उसको सह लेता है, उसको और स्त्रीके यशमें रहनेवाले पुरुषका अन्न; दसदिनके भीतर मृतसूतकका अन्न और अतुष्टिकर अन्न कभी नहीं खावे।[84]राजाके अन्न खानेसे तेज, शूद्रके अन्नसे ब्रह्मतेज, सोनारके अन्न खानेसे आयु, चमारके अन्नसे यश, चित्रकार आदि कारुकके अन्नसे सन्तान और धोबीके अन्न खानेसे बल नष्ट होता है, समाजके एकत्रित अन्न, और वेश्याके अन्न खानेसे सञ्चित पुण्य नष्ट होजाते हैं।[85]जो ब्राह्मण अज्ञानसे इनका अन्न खाता है वह

---

[84] अभिशस्तस्य षण्ढस्य पुंचल्या दाम्भिकस्य च । शुक्तं पर्युषितञ्चैव शूद्रस्योच्छिष्टमेव च ॥

चिकित्सकस्य मृगयोः क्रूरस्योच्छिष्टभोजिनः । उग्रान्नं सुतिकान्नश्चे पर्याचान्नमनिर्दशम् ॥

अनचितं वृथा मांसमवीरायाश्च योषिणः । द्विषदन्नं नगर्यन्नं पतितान्नमवक्षुतम् ॥

पिशुनानृतिनोश्चान्नं क्रतुविक्रयिणस्तथा । शैलूषतुन्नवायान्नं कृतघ्नस्यान्नमेव च ॥

कर्मारस्य निषादस्य रङ्गावतारकस्य च । सुवर्णकर्तुर्वेणस्य शस्त्रविक्रयिणस्तथा ॥

श्ववतां शौण्डिकानाञ्च चैलनिर्णेजकस्य च । रजकस्य नृशंसस्य यस्य चोपपतिगृहे ॥

मृष्यन्ति ये चोपपतिं स्त्रीजितानां च सर्वर्शः । अनिर्दशं च प्रेतान्नमतुष्टिकरमेव च ॥ मनु ४/२११-२१७

[85] राजान्नं तेज आदत्ते शूद्रानं ब्रह्मवर्चसम् | आयुः सुवर्णकारान्नं यशश्चर्मावकर्तिनः ॥

कारुकान्नं प्रजां हन्ति वलं निर्णेजकस्य च | गणान्नं गणिकान्नं च लोकेभ्यः परिकृन्तति ॥ मनु ४/२१८-२१९

३ रात उपवास करे और जो ब्राह्मण जानकर खाता है वह कृच्छ्रव्रत करे। ऐसे ही वीर्य, विष्ठा तथा मूत्र भक्षण करनेमें प्रायश्चित्त करे। विद्वान् ब्राह्मणको उचित है कि श्राद्धकर्मसे हीन शूद्रका पकाहुआ अन्न नहीं खावे; किन्तु अन्न नहीं मिलनेपर एकरात निर्वाह योग्य उससे कच्चा अन्न ले लेवे।[86]अपने साझीदार, कुलके मित्र, गोपालक, दास, नाई और अपनेको समर्पण कर देनेवाले; इतने शूद्रोंका अन्न खाना चाहिये।[87]मद्य, मांस और सुराका आसव (सद्यः खींचाहुआ मद्य अर्क) ये सब यक्ष, राक्षस और पिशाचोंके अन्न हैं इन्हें ब्राह्मण कदापि नहीं भक्षण करें; क्यों कि वे लोग देवताओंके हवि भोजन करने वाले हैं।[88]शूद्र दो प्रकारके होते हैं, एक श्राद्धका अधिकारी और दूसरा अनधिकारी; इनमें से श्राद्ध के अधिकारी शूद्रका अन्न खाना चाहिये; किन्तु अनधिकारीका नहीं। जो शूद्र अपना प्राण धन तथा स्त्रीको ब्राह्मणकी सेवामें समर्पण कर देवे उसका अन्न ब्राह्मण भोजन करे; अन्य शूद्रका नहीं।[89]जो ब्राह्मण निरन्तर एक महीने तक शूद्रका अन्न खाता है वह

---

[86] भुक्त्वातोन्यतमस्यान्नममत्या क्षपणं त्र्यहम् | मत्या भुक्त्वा चरेत्कृच्छ्रं रेतो विण्मूत्रमेव च ॥

नाद्याच्छूद्रस्य पक्कान्नं विद्वानश्राद्धिनो द्विजः । आददीताममेवास्मादवृत्तावेकरात्रिकम् ॥ मनु ४/२२२-२२३ ॥

[87] आर्थिकः कुलमित्रं च गोपालो दासनापितौ । एते शुद्रेषु भोज्यान्ना यश्चात्मानं निवेदयेत् ॥ मनु ४/२५३ ॥

[88] यक्षरक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानामश्नता हविः ॥ मनु११/९६ ॥

[89] शूद्रोपि द्विविधो ज्ञेयः श्राद्धी चैवेतरस्तथा । श्राद्धी भोज्यस्तयोरुक्तो ह्यभोज्यस्त्वितरो मतः ॥

प्राणानथस्तथा दारान्ब्राह्मणार्थं निवेदयेत् । स शूद्रजातिर्भोज्यः स्यादभोज्यः शेष उच्यते ॥विष्णु स्मृति ५/१०,११

इसी जन्ममें शूद्र होजाता है और मरनेपर कुत्ता होता है ।[90]कन्या या युवा ब्राह्मणी और थोड़ा पढ़ा हुआ, मूर्ख, रोगी अथवा संस्कारहीन ब्राह्मण होम करनेका अधिकारी नहीं है। इनमेंसे जो होम करता है अथवा जो इनसे होम करवाते हैं वे नरकमें जाते हैं, इसलिये वैदिक कर्ममें निपुण वेदपारग ब्राह्मणसे होम कराना चाहिये।[91]वेद और धर्मशास्त्र ये ब्राह्मणके दो नेत्र हैं; जो ब्राह्मण इनमेंसे एकको नहीं जानता वह काना और जो दोनोंको नहीं जानता वह अन्धा कहा जाता है। ब्राह्मणका ब्राह्मणत्व वेद और धर्म शास्त्रसे है, केवल वेदसे ही नहीं है; ऐसा भगवान् अत्रिने कहा है।[92]१० प्रकारके ब्राह्मण कहे जाते हैं; - देव, मुनि, द्विज, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद, पशु, म्लेच्छ और चाण्डाल।[93]

(१) जो ब्राह्मण नित्य सन्ध्या, स्नान, जप, होम, देवपूजन, अतिथिसत्कार और बलिवैश्वदेव करताहै उसको देव कहतेहैं[94]

---

[90] योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् । स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥ मनु २.१६८

[91] न वै कन्या न युवतिर्नाल्पविद्यो न बालिशः | होता स्यादग्निहोत्रस्य नार्ती नासंस्कृतस्तथा ॥३६॥

नरके हि पतन्त्येते जुह्वन्तः स च यस्य तत् । तस्माद्वैतानकुशलो होता स्याद्वेदपारगः ॥ मनु ११.१६८

[92] श्रुतिः स्मृतिश्च विप्राणां नयने द्वे प्रकीर्तिते । काणः स्यादेकहीनोपि द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः ॥

तस्माद्वेदेन शास्त्रेण ब्राह्मण्यं ब्राह्मणस्य तु । न चैकेनैव वेदेन भगवानत्रिरब्रवीत् ॥ अत्रि ३४९,४५१

[93] देवो मुनिर्द्विजो राजा वैश्यः शूद्रो निषादकः । पशुम्लेच्छोऽपि चाण्डालो विप्रा दशविधाः स्मृताः ॥

[94] सन्ध्या स्नानं जपं होमं देवतानित्यपूजनम् । अतिथिर्वैश्वदेवश्च देवब्राह्मण उच्यते ॥ अत्रि ३७२